



2026:AHC:17868

इलाहाबाद उच्च न्यायालय

रिट - ए संख्या - 15558 वर्ष 2025

अमृता यादव

..... याचिकाकर्ता

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य और 4 अन्य

....प्रतिपक्षी

याचिकाकर्ता के अधिवक्ता : अतिप्रिया गौतम, सौंदर्य गिरी, वरिष्ठ अधिवक्ता

प्रतिपक्षी के अधिवक्ता : मुख्य स्थायी अधिवक्ता

न्यायालय संख्या- 33

माननीय न्यायमूर्ति विकास बुधवार

1. याचिकाकर्ता की ओर से विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री विजय गौतम, जिनकी सहायता सुश्री वैष्णवी श्रीवास्तव कर रही थीं और जो सुश्री अतिप्रिया गौतम की होल्डिंग ब्रीफ से संक्षिप्त रूप से उपस्थित थीं, तथा राज्य की ओर से विद्वान स्थायी अधिवक्ता श्री आर.एस. उमराव की बात सुनी गई।
2. इस न्यायालय ने 16.10.2025 को रिट याचिका पर सुनवाई की और विद्वान स्थायी अधिवक्ता को निर्देश प्राप्त करने के लिए कहा, जो इस न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किए गए हैं।
3. याचिकाकर्ता का प्रकरण यह है कि उन्हें वर्ष 2012 में सेवाकाल मृत्यु नियमों के अंतर्गत उप-निरीक्षक के पद पर नियुक्त किया गया था। हालांकि, याचिकाकर्ता अपने कर्तव्यों का पालन करते समय भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 7, 13(2) और धारा 13(1)(डी) के तहत आपराधिक प्रकरण संख्या 111 वर्ष 2017 में आरोपित किया गया। याचिकाकर्ता को भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम (वी.बी.यू.पी.एस.ई.बी.) के विशेष न्यायाधीश/अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश, मेरठ द्वारा आपराधिक प्रकरण संख्या 24/79/2017 में दिनांक 05.09.2024 को दोषी ठहराया गया।
4. इससे व्यथित होकर याचिकाकर्ता ने आपराधिक अपील संख्या 10957 वर्ष 2024 दायर की, जिसमें 12.08.2025 को याचिकाकर्ता को जमानत दी गई और प्रकरण की सुनवाई के दौरान याचिकाकर्ता को दी गई सजा को निलंबित कर दिया गया। पूर्व आपराधिक प्रकरण के कारण याचिकाकर्ता को 04.09.2024 से 20.08.2025 तक जेल में रखा गया और उसके बाद बिना

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



कारण बताओ सूचना जारी किए, डीआईजी, मेरठ रेंज, मेरठ द्वारा 04.05.2025 को आपराधिक प्रकरण में दोषसिद्धि के आधार पर याचिकाकर्ता को सेवा से बर्खास्त करने का आदेश पारित किया गया।

5. उक्त आदेश पर सवाल उठाते हुए याचिकाकर्ता ने वर्तमान याचिका दायर की है।

6. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने यह तर्क दिया है कि सबसे पहले, अनुशासनात्मक/नियुक्ति प्राधिकारी ने नियम 8 (2) (क) के आलोक में नियमित जांच से छूट देकर विधिगत त्रुटि की है, क्योंकि यह एक ऐसा प्रकरण था जिसमें विभागीय जांच की जानी चाहिए थी। आगे यह तर्क दिया गया है कि जब याचिकाकर्ता द्वारा दायर आपराधिक अपील में इस न्यायालय द्वारा सजा पर रोक लगा दी गई है, तो नियमित जांच का आयोजन एक पूर्व शर्त थी। आगे यह भी तर्क दिया गया है कि उक्त सजा लगाने से पहले याचिकाकर्ता को सूचना भी नहीं दिया गया था। इस संबंध में इस न्यायालय की समवर्ती पीठ के **सिविल विविध रिट याचिका संख्या 2153 वर्ष 2025, संतोष कुमार सिंह बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य**, दिनांक 12.05.2025 और **रिट-ए संख्या 359 वर्ष 2021, माधो सरन शुक्ला बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य**, 30.10.2025 के निर्णयों का भी हवाला दिया गया है।

7. प्रतिपक्षी की ओर से उपस्थित विद्वान स्थायी अधिवक्ता ने आदेश का समर्थन करते हुए तर्क दिया कि याचिकाकर्ता के दोषी ठहराए जाने के बाद, अधिकारियों को प्रकरण पर विचार-विमर्श करने के बाद इस निष्कर्ष पर पहुंचना था कि यह 1991 के नियमों के नियम 8(2)(क) के तहत जांच न करने का एक उपयुक्त प्रकरण था। यह भी तर्क दिया गया कि निलंबन पर रोक लगाना दोषसिद्धि पर रोक लगाने से बिल्कुल भिन्न है। उनके अनुसार, दोषसिद्धि की तलवार अभी भी याचिकाकर्ता के गले में लटकी हुई है।

8. श्री आर.एस. उमराव, विद्वान स्थायी अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि केवल एक अनियमितता है, अर्थात् इस तथ्य से संबंधित कि रिट याचिकाकर्ता को सूचना नहीं दिया गया था।

9. मैंने बार के समक्ष प्रस्तुत की गई दलीलें सुनी हैं और अभिलेखों का ध्यानपूर्वक अध्ययन किया है।

10. तथ्य विवादित नहीं हैं। यह विवाद का विषय नहीं है कि याचिकाकर्ता एक उप निरीक्षक होने के नाते, उनकी सेवा शर्तें उत्तर प्रदेश पुलिस अधीनस्थ अधिकारी (दंड एवं अपील) नियम 1991 के प्रावधानों के अंतर्गत आती हैं। चुनौती दिए गए आदेश में याचिकाकर्ता की सेवा समाप्त करने के लिए 1991 के नियमों के नियम 8(2)(क) के प्रावधानों का हवाला दिया गया



है। याचिकाकर्ता को बर्खास्त करने का मूल कारण आपराधिक मुकदमे में दोषसिद्धि है, अतः बर्खास्तगी का दंड आदेश उस आचरण पर आधारित है जिसके कारण उन्हें आपराधिक मुकदमे में दोषी ठहराया गया। स्पष्टतः, आक्षेपित आदेश पारित करने से पहले याचिकाकर्ता को सूचित नहीं किया गया है। हालांकि प्रतिपक्षी का मत था कि नियमित विभागीय जांच आवश्यक नहीं है। संतोष कुमार सिंह (पूर्व) प्रकरण में निम्नलिखित टिप्पणी की गई थी:-

“8. याचिकाकर्ता की सेवा समाप्त करने के आक्षेपित आदेश को देखते हुए, न्यायालय पाता है कि यह आदेश आपराधिक प्रकरण में दोषसिद्धि के परिणामस्वरूप पारित किया गया है, मानो सेवा से बर्खास्तगी स्वतः ही होनी थी। पूर्व उद्धृत निर्णयों के आलोक में, न्यायालय पाता है कि न्यायालयों ने इस सिद्धांत पर बल दिया है कि कम से कम एक कर्मचारी को यह स्पष्टीकरण देने का अवसर दिया जाना चाहिए कि आपराधिक प्रकरण में दोषी ठहराए जाने के आधार पर उसकी सेवा समाप्त क्यों नहीं की जानी चाहिए और इस संबंध में अपनी स्थिति स्पष्ट करने का अवसर दिया जाना चाहिए। निर्णय के अनुसार, यह संविधान के अनुच्छेद 311(2) के परंतुक के तहत कार्रवाई से सुरक्षा प्रदान करता है। अनुच्छेद 311(2) नीचे दिया गया है:

“(2) उपर्युक्त किसी भी व्यक्ति को तब तक बर्खास्त, पदच्युत या पदावनत नहीं किया जाएगा जब तक कि उसके विरुद्ध लगाए गए आरोपों की जानकारी उसे दे दी जाए और उन आरोपों के संबंध में उसे सुनवाई का उचित अवसर न दिया जाए।

बशर्ते कि यदि ऐसी जांच के बाद उस व्यक्ति पर कोई ऐसा दंड लगाने का प्रस्ताव हो, तो ऐसा दंड ऐसी जांच के दौरान प्रस्तुत साक्ष्यों के आधार पर लगाया जा सकता है और ऐसे व्यक्ति को प्रस्तावित दंड पर अपना पक्ष रखने का कोई अवसर देना आवश्यक नहीं होगा।

इसके अलावा यह प्रावधान लागू नहीं होगा-

(क) जहां किसी व्यक्ति को आपराधिक आरोप में दोषसिद्धि का कारण बनने वाले आचरण के आधार पर बर्खास्त या पदच्युत किया जाता है; या

(ख) जहां किसी व्यक्ति को बर्खास्त करने या हटाने या उसके पद में कमी करने के लिए अधिकृत प्राधिकारी संतुष्ट हो कि किसी कारणवश, जिसे उस प्राधिकारी द्वारा लिखित रूप में दर्ज किया जाएगा, ऐसी जांच करना यथोचित रूप से व्यावहारिक नहीं है; या

(ग) जहां राष्ट्रपति या राज्यपाल, जैसा भी प्रकरण हो, इस बात से संतुष्ट हो कि राज्य की सुरक्षा के हित में ऐसी जांच करना उचित नहीं है।”



9. इस न्यायालय ने पाया है कि राम किशन (पूर्व) के प्रकरण में, इस न्यायालय की एक समन्वय पीठ ने न केवल तुलसी राम पटेल (पूर्व) के फैसले का अनुसरण किया है, बल्कि श्याम नारायण शुक्ला बनाम उत्तर प्रदेश राज्य 1988 (6) एलसीडी 530 के प्रकरण में खंडपीठ के फैसले के साथ-साथ सदानंद मिश्रा बनाम उत्तर प्रदेश राज्य 1993 एलसीडी 70 और शंकर दास बनाम भारत संघ 1985 (2) एससीआर 358 के प्रकरण में अन्य खंडपीठ के फैसलों का भी अनुसरण किया है।

10. यह सत्य है कि किसी शासकीय कर्मचारी को आपराधिक प्रकरण में दोषी पाए जाने पर प्राधिकारी उसे बर्खास्त कर सकता है, परन्तु यह विवेकाधिकार, जो विवेक के सिद्धांत पर आधारित है, पूर्ण नहीं माना जा सकता। यहाँ यह शर्त रखी गई है कि किसी कर्मचारी की सेवा समाप्त करने का आदेश पारित करने से पहले, प्राधिकारी उस कर्मचारी के आचरण पर विचार करेगा जिसके कारण उसे दोषी ठहराया गया है और फिर यह तय करेगा कि उसे क्या दंड दिया जाना चाहिए।

11. राम किशन (पूर्व) के फैसले के अनुच्छेद 9, 10, 11, 12, 13 और 14 इस प्रकार हैं:

“9. भारत संघ बनाम तुलसीराम पटेल, (1985) 3 एससीसी 398 में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने भारत के संविधान के अनुच्छेद 311(2) के प्रावधानों पर विचार किया और निम्नानुसार निर्णय दिया:-

“दूसरा प्रावधान केवल तभी लागू होगा जब किसी शासकीय कर्मचारी का आचरण ऐसा हो कि वह बर्खास्तगी, पदावनति या पद में कमी के दंड का पात्र हो। यदि आचरण ऐसा हो कि पूर्व दंडों से भिन्न दंड का पात्र हो, तो दूसरा प्रावधान लागू नहीं हो सकता, क्योंकि अनुच्छेद 311(2) स्वयं केवल इन्हीं तीन दंडों तक सीमित है। इसलिए, किसी शासकीय कर्मचारी को जांच के उसके संवैधानिक अधिकार से वंचित करने से पहले, पहला विचार यह होगा कि क्या संबंधित शासकीय कर्मचारी का आचरण बर्खास्तगी, पदावनति या पद में कमी के दंड को उचित ठहराता है। एक बार यह निष्कर्ष निकल जाने पर और दूसरे प्रावधान के संबंधित खंड में निर्दिष्ट शर्त पूरी हो जाने पर, वह प्रावधान लागू हो जाता है और शासकीय कर्मचारी जांच का हकदार नहीं रहता।”

10. श्याम नारायण शुक्ला बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, (1988) 6 एलसीडी 530 में, इस न्यायालय की एक खंडपीठ ने इसी प्रकार के प्रश्न पर विचार किया और निम्नानुसार निर्णय दिया:-

सर्वोच्च न्यायालय के पूर्व निर्णय के मद्देनजर, यह माना जाना चाहिए कि जब भी कोई शासकीय कर्मचारी किसी अपराध में दोषी पाया जाता है, तो उसे केवल दोषसिद्धि के आधार पर



सेवा से बर्खास्त नहीं किया जा सकता है, बल्कि उपयुक्त प्राधिकारी को उस कर्मचारी के आचरण पर विचार करना होगा जिसके कारण उसे दोषी ठहराया गया है और फिर यह तय करना होगा कि उसे क्या सजा दी जानी चाहिए। आचरण पर विचार करने और सजा की मात्रा निर्धारित करने के प्रकरण में कर्मचारी को शामिल नहीं किया जाना चाहिए और निर्णय उपयुक्त प्राधिकारी द्वारा कर्मचारी से स्वतंत्र रूप से लिया जाना चाहिए, जिसे सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित अनुसार, उस स्तर पर सुनवाई का अवसर नहीं दिया जाना चाहिए।

11. इस न्यायालय की एक अन्य खंडपीठ ने सदानंद मिश्रा बनाम उत्तर प्रदेश राज्य 1993 एलसीडी 70 प्रकरण में यह माना कि किसी कर्मचारी को आपराधिक आरोप में दोषी ठहराए जाने पर, सजा का आदेश तब तक पारित नहीं किया जा सकता जब तक कि उस आचरण पर भी विचार न किया जाए जिसके कारण उसे दोषी ठहराया गया है। आगे यह भी माना गया कि किसी कर्मचारी के उस आचरण की जांच या परीक्षण जिसके कारण उसे दोषी ठहराया गया है, एकतरफा किया जाना चाहिए और इस उद्देश्य के लिए संबंधित कर्मचारी को सुनवाई का अवसर प्रदान नहीं किया जाना चाहिए।

12. शंकर दास बनाम भारत संघ, 1985 (2) एससीआर 358 में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने भारत के संविधान के अनुच्छेद 311(2) के द्वितीय परंतुक के खंड (क) के अंतर्गत शक्ति का उल्लेख करते हुए निम्नलिखित टिप्पणी की है: -

"अन्य सभी शक्तियों की तरह, उस शक्ति का भी प्रयोग निष्पक्ष, न्यायसंगत और तर्कसंगत तरीके से किया जाना चाहिए।"

13. भारत के संविधान के अनुच्छेद 311 का परंतुक (क), अनुच्छेद 311 के खंड (2) का अपवाद है, जो उस स्थिति में लागू होता है जब किसी व्यक्ति को आपराधिक आरोप में दोषसिद्धि के आधार पर बर्खास्त, पदच्युत या पदावनत किया जाता है। संभागीय कार्मिक अधिकारी, दक्षिणी रेलवे बनाम टी.आर. चेल्लाप्पन, 1976 (3) एससीसी 190 (प्रस्तर-21), के प्रकरण में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अनुच्छेद 311(2), परंतुक (क) पर विचार किया। और यह माना गया कि यह प्रावधान अनुशासनात्मक प्राधिकारी को यह निर्णय लेने का अधिकार देता है कि किसी विशेष प्रकरण के तथ्यों के आधार पर, दोषी कर्मचारी के संपूर्ण आचरण, उसके द्वारा किए गए दुराचार की गंभीरता, प्रशासन पर उसके दुराचार के संभावित प्रभाव और प्रकरण में मौजूद अन्य कम करने वाली परिस्थितियों या सकारात्मक पहलुओं आदि को ध्यान में रखते हुए, उस पर क्या दंड लगाया जाना चाहिए। दोषी कर्मचारी की दोषसिद्धि को दुराचार का पर्याप्त प्रमाण माना



जाएगा और फिर प्राधिकारी को दोषी कर्मचारी पर लगाए जाने वाले दंड की प्रकृति और सीमा के संबंध में एक संक्षिप्त जांच शुरू करनी होगी और जांच के दौरान, यदि प्राधिकारी की राय है कि अपराध बहुत मामूली या तकनीकी प्रकृति का है, तो वह दोषसिद्धि के बावजूद कोई दंड लगाने से इनकार कर सकता है। अनुशासनात्मक प्राधिकारी को दोषी कर्मचारी की बात सुनने और प्रकरण की परिस्थितियों पर विचार करने के बाद, बिना किसी और विभागीय जांच के दोषी कर्मचारी पर कोई भी बड़ी सजा देने का निर्विवाद अधिकार है, यदि प्राधिकारी की राय है कि कर्मचारी नैतिक पतन से संबंधित किसी गंभीर अपराध का दोषी है और इसलिए ऐसे व्यक्ति को सेवा में बनाए रखना प्रशासन के हित में वांछनीय या अनुकूल नहीं है। सुशील कुमार सिंघल बनाम क्षेत्रीय प्रबंधक, पंजाब नेशनल बैंक, 2010 (8) एससीसी 573 (प्रस्तर-24 और 25) में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने 'नैतिक पतन' शब्द का अर्थ स्पष्ट करते हुए कहा है कि इसका अर्थ ईमानदारी, शालीनता या अच्छे नैतिक मूल्यों के विपरीत कुछ भी है।

14. इस प्रकार, माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा तुलसीराम पटेल (पूर्व), टी.आर. चेल्लापन (पूर्व) और शंकर दास (पूर्व) के प्रकरण में दिए गए कानून और इस न्यायालय के दो खंडपीठ निर्णयों श्याम नारायण शुक्ला (पूर्व) और सदानंद मिश्रा (पूर्व) के आलोक में, यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि याचिकाकर्ता को सेवा से हटाते समय, प्रतिपक्षी को याचिकाकर्ता के उस आचरण पर विचार करना अनिवार्य था, जिसके कारण सत्र न्यायालय में उसे दोषी ठहराया गया था। सेवा से हटाने की सजा देने के लिए सक्षम प्राधिकारी को अधिकार प्राप्त करने हेतु यह पूर्व शर्त थी। हालांकि, दुर्भाग्यवश, आक्षेपित आदेश में याचिकाकर्ता के उस आचरण पर कोई विचार नहीं किया गया है जिसके कारण उसे एस.टी. संख्या 178 वर्ष 2005 में दोषी ठहराया गया था। आक्षेपित आदेश पारित करते समय प्रतिपक्षी के लिए याचिकाकर्ता के उस आचरण पर विचार करना आवश्यक था जिसके कारण उसे दोषी ठहराया गया था और फिर यह तय करना कि उसे क्या सजा दी जानी चाहिए। याचिकाकर्ता को सेवा से हटाते समय प्रतिपक्षी संख्या 2 ने ऐसा नहीं किया है। अतः, आक्षेपित आदेश को वैध नहीं ठहराया जा सकता और इसे निरस्त किया जाता है।"

12. हाल ही में, इस न्यायालय की समन्वय पीठ ने मनोज कुमार कटियार (पूर्व) प्रकरण में इसी सिद्धांत को दोहराया है और उस प्रकरण के तथ्यों पर चर्चा की है जिसमें आपराधिक मुकदमे में दोषसिद्धि के बाद याचिकाकर्ता की सेवाएं समाप्त कर दी गई थीं। न्यायालय ने प्रस्तर 22 में कहा कि बर्खास्तगी का आदेश भारत के संविधान के अनुच्छेद 311(2) के परंतुक के दायरे में



नहीं आता है और फिर आदेश को रद्द करते हुए प्रकरण को नए सिरे से निर्णय के लिए वापस भेज दिया।”

11. चूंकि याचिकाकर्ता को जुर्माना लगाने से पहले सूचना नहीं दिया गया है बर्खास्तगी की सजा के मद्देनजर, आक्षेपित आदेश को बरकरार नहीं रखा जा सकता।

12. इस स्तर पर विद्वान स्थायी अधिवक्ता ने अपने मुवक्किल के निर्देशों के अनुसार एक बयान दिया है कि सजा के आदेश को रद्द कर दिया जाए और प्रकरण को नए सिरे से आदेश पारित करने के लिए वापस भेज दिया जाए।

12. तदनुसार, रिट याचिका का निस्तारण निम्नलिखित शर्तों के अनुसार किया जाता है:-

(क) प्रतिपक्षी संख्या 3, डीआईजी, मेरठ रेंज, मेरठ द्वारा दिनांक 04.05.2025 को पारित आदेश रद्द किया जाता है।

(ख) याचिकाकर्ता को कारण बताओ सूचना जारी करने के बाद प्रकरण को प्राधिकरण को वापस भेज दिया जाता है।

13. रिट याचिका की जो स्थिति आज है, वह नए आदेश पारित होने तक बरकरार रहेगी।

27 जनवरी, 2026

एन.एस.राठौर

(न्यायमूर्ति विकास बुधवार)